दिल्ली शहर में खेती - 4

दिल्ली में शहरी खेती की रूह हैं महिलाएँ

जन संसाधन केंद्र

दिल्ली में शहरी खेती की रूह हैं महिलाएँ

PEOPLE'S RESOURCE CENTRE

दिल्ली में शहरी खेती की रूह हैं महिलाएँ

यह प्रकाशन क्रिएटिव कॉमन्स एट्रिब्यूशन 4.0 अंतर्राष्ट्रीय लाइसेंस के तहत उपलब्ध कराया गया है :
http: //creativecommons.org/licenses/by/4.0

इस प्रकाशन के किसी भी हिस्से का अनुवाद किया जा सकता है या उसे गैर-व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए लेखकों या पीपुल्स रिसोर्स सेंटर की पूर्व अनुमति के बिना पुनः प्रकाशित किया जा सकता है; लेकिन जन संसाधन केंद्र का सन्दर्भ दिया जाना जरूरी है।

नवंबर, 2020

शोध और पुनर्लेखन : अक्षिता रावत, निशांत
डिज़ाइन : आकिज़ फ़ारूक़
छाया चित्र : अफ़ज़ल अदीब खान, अविकल पाराशरी, जो अथियाली, सृजन चावला
मूल शोध और आलेख : राधेश्याम मंगोलपुरी, राजेन्द्र रवि
शब्द संयोजन : अर्जुन सिंह
सहयोग : अनीता कपूर, नान्हू प्रसाद, राहुल कुमार, सुनीता रानी

प्रकाशक
जन संसाधन केंद्र (PRC) [www.prcindia.in]

सहयोग
इंस्टिट्यूट फॉर डेमोक्रेसी एंड सस्टेनेबिलिटी (आईडीएस), और
इंडिया इंस्टीट्यूट फॉर क्रिटिकल एक्शन : सेंटर इन मूवमेंट (CACIM) [www.cacim.net]

संपर्क
मकान सं. 7, लेन सं. 6, ब्लॉक-ए, हिमगिरि एन्क्लेव, पेप्सी रोड, मेन बुरारी रोड, नई दिल्ली -110084
prcindia@yahoo.com | @prc_in | + 91 98682 00316

केवल निजी वितरण के लिए

"..महिलाएँ ही थीं जिन्होंने टोकरियों की बुनाई करके और मिट्टी के बर्तन गढ़कर सबसे पहले कंटेनर बनाए... खेती और घरेलू विकास के इस लम्बे समयकाल के बिना भोजन और श्रमशक्ति इतने आधिक्य में उपलब्ध नहीं हो पाता कि शहरी जीवन संभव हो सके।" - लेविस ममफोर्ड (द सिटी इन हिस्ट्री, पृष्ठ 12)

दिल्ली के अलग-अलग इलाकों में हो रही खेती में बड़ी तादाद में महिलाएँ भिन्न-भिन्न भूमिकाओं में सक्रिय हैं। महिलाएँ किसान तो हैं ही; खेतिहर मजदूरों और चरवाहों में भी हमने महिलाओं की अच्छी-खासी संख्या देखी। इसके अलावा हाट-बाजारों में भी फल-सब्जियाँ बेचती महिलाएँ मिल जाएँगी। इस तरह दिल्ली के भोजन तंत्र में महिलाओं की अहम भूमिका है। ऐसा नहीं है कि सभी महिलाओं के अनुभव और विचार एक जैसे हैं- हमें अलग-अलग जगहों और अलग-अलग समुदायों की महिलाओं के साथ बात करने पर शहरी खेती की जीवंत विविधता समझ में आई।

वैसे दुनिया के ज्यादातर इलाकों में शहरी खेती के कामों में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों से ज्यादा देखी गई है। अमूमन खेती (न सिर्फ शहरी खेती) में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी रहती ही है। संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agricultural Organisation) के आँकड़ों के मुताबिक दुनिया भर में खेत में काम करने वालों में 43% महिलाएँ हैं (स्रोत : खाद्य एवं सुरक्षा संगठन)।

शहरी खेती में लगी महिलाएँ ज्यादातर भूमिहीन प्रवासी महिलाएँ हैं। कोई अपने गाँव से हाल-फिलहाल आई है तो किसी-किसी को दिल्ली में रहते 40-50 साल से ज्यादा हो गए हैं। स्कूली शिक्षा न होने के

चिल्ला खादर, दिल्ली
तस्वीर : अविकल पाराशरी, सृजन चावला

कारण उन्हें औपचारिक क्षेत्र में नौकरियों के अवसर लगभग नहीं ही मिलते हैं। भारत में अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वालों के बारे में बहुत व्यवस्थित आँकड़े नहीं हैं; इसलिए पक्के तौर पर नहीं कहा जा सकता कि कितनी महिलाएँ शहरी खेती में लगी हुई हैं। लेकिन हाल के वर्षों में अफ्रीका के कई देशों में जो अलग-अलग अध्ययन किए गए हैं; उन से पता चलता है कि शहरों और उसके आस-पास के इलाकों में हो रही खेती में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों के मुकाबले कहीं ज्यादा है। खास तौर से भोजन को बाजार पहुँचाने और बाजार के जरिये खाद्य सामग्री को उपभोक्ताओं को बेचने के काम में तो महिलाएँ ही लगी हैं। एक अन्य सर्वे के अनुसार शहरी खेती में ज्यादातर महिलाएँ सिर्फ परिवार के गुजर-बसर के लिए खेती करती हैं (फ्रीमैन, 1991)। 1973 में केमरून देश के याउंडे शहर में छोटे व्यापारियों में 89% महिलाएँ थीं जो खाना पैदा कर के उत्पादन को सर पर उठाकर शहर लाया करती थीं। अभी हाल फिलहाल में केन्या के नैरोबी शहर में किए गए एक अध्ययन से पता चला कि शहरी इलाकों में फल और सब्जियों की ज्यादातर दुकानें महिलाएँ ही चलाती हैं। अफ्रीका के अलावा लैटिन अमेरिका, दक्षिण-पूर्वी एशिया, मध्य-पूर्व, और पश्चिम के भी कई शहरों में हो रही खेती में महिलाएँ अधिक संख्या में शामिल हैं (होवोरका और ली-स्मिथ, 2006)। शहरी खेती के कुछ ऐसे भी रूप हैं, जैसे छतिया खेती, जो न केवल परिवार के बेहतर पोषण में मदद करते हैं बल्कि यहाँ महिलाएँ अपने लिए एक खास सांस्कृतिक-पर्यावरणीय जगह बनाती हैं। इस तरह से भोजन के उत्पादन और परिस्थितियों पर महिलाओं की अलग छाप पड़ती है और इसके जरिये उनकी शक्ति में भी इजाफा होता है (बून और टेलर, 2015)।

जगतपुर गाँव
तस्वीर : जो अथियाली

पल्ला गाँव, दिल्ली

तस्वीर : अविकल पाराशरी, सृजन चावला

कई जगहों पर ऐसा भी देखा गया है कि महिलाओं ने शहरी खेती को अपनाया तो गुजर-बसर और जरूरत के लिहाज से, लेकिन आगे चलकर यह उनके लिए बंधनों से मुक्ति का जरिया बन गया। उदाहरण के लिए बोत्स्वाना में महिलाएँ अपने समुदाय के पुरुषों के मुकाबले आर्थिक रूप से काफी कमजोर और कम पढ़ी-लिखी थीं। उन सबके लिए, और उनके लिए भी जिनकी आर्थिक स्थिति थोड़ी ठीक थी, शहरी खेती 'पुरुष-प्रधान' समाज में खुद के सशक्तीकरण और खुद के लिए एक जगह बनाने का जरिया बनी (होवोरका, 2006)।

ऐसा नहीं है कि शहरी खेती का काम करते रहने से ही महिलाएँ सशक्त हो जाएँगी। लिंग-आधारित भेदभाव, संसाधनों में हिस्सेदारी और इस्तेमाल को लेकर पाबन्दियाँ, आवाजाही पर रोकटोक – इन सब कारणों से महिलाएँ हाशिये पर हैं और ये कारण हमारी सामाजिक, आर्थिक और कानूनी परिस्थितियों में गहरे जुड़े हुए हैं। इन पेंचीदा रिश्तों पर पर्याप्त अध्ययन नहीं किया गया है।

गौर करने की बात है कि महिलाओं, खास तौर से शहरी क्षेत्र में खेती करने वाली महिलाओं, के द्वारा खेती में योगदान को सरकारी आँकड़ों में भी पूरी मान्यता नहीं मिलती रही है। मसलन राष्ट्रीय खातों की भारतीय प्रणाली में घरेलू उपभोग के लिए हो रहे कृषि उत्पादन (जैसे गुड़ तैयार करना, धान की भूसी निकालना, अनाज पीसना, चटाइयाँ और टोकरियाँ बनाना आदि) को आर्थिक गतिविधि में नहीं गिना जाता। इसके अलावा अगर कोई महिला सब्जी के बगीचों, मुर्गी पालन या डेयरी आदि में थोड़ा सहयोग करती है तो उसे आर्थिक गतिविधि में नहीं गिना जाता। दूसरा, कई शोधकर्ताओं का कहना है कि राष्ट्रीय स्तर के ये सभी सर्वे परिवारों (हाउसहोल्ड) का सर्वेक्षण करते हैं जिसकी वजह से परिवार के अंदरूनी रिश्तों और हलचल को इनमें दर्ज नहीं किया जा पाता, जबकि लैंगिक नजरिये से यह जानकारी काफी अहम है (यू.एन. वीमेन, 2017)।

चिल्ला खादर, दिल्ली
तस्वीर : अविकल पाराशरी

हालाँकि पिछले कुछ समय से राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण ने महिलाओं के घरेलू कामों और परिवार के अन्य आर्थिक कार्यकलापों में उनकी भागीदारी के बारे में सूचना इकट्ठा करना शुरू किया है। इन सर्वेक्षणों के 68 वें दौर (जुलाई 2011-जून 2012) में प्राप्त आँकड़ों के मुताबिक़ भारतीय शहरों में 5 साल से अधिक उम्र की महिलाओं का लगभग 15 प्रतिशत किसी न किसी तरह की खेती से सम्बंधित क्रियाकलाप (जैसे साग-सब्जी के बगीचे का रखरखाव, मुर्गी पालन, डेयरी आदि) में मेहनत करता है (रा.प्र.स.-68 वाँ दौर, रिपोर्ट सं. 559, पृष्ठ 15-22)।

2011 की आम जनगणना के अनुसार, शहरों में कुल कार्यबल का लगभग 12 प्रतिशत और महिला कार्यबल का 17 प्रतिशत खेती या खेती से जुड़े कामों से आजीविका पाता है। अगर सिर्फ 6 महीने से कम काम करने वाले श्रमिकों को देखें (गौरतलब है कि शहरी खेती में इन श्रमिकों की सबसे बड़ी भूमिका रहती है) तो उनमें से लगभग 37 प्रतिशत श्रमिक और महिला श्रमिकों में से 41 प्रतिशत महिलाएँ साल में कभी न कभी (लेकिन 6 महीने से कम समय के लिए) खेती के कामों से आजीविका जुटाती हैं (भारत की आम जनगणना 2011 के आधार पर लेखकों द्वारा आँकलन)।

जगतपुर गाँव

तस्वीर : जो अथियाली

चिल्ला खादर, दिल्ली
तस्वीर : अविकल पाराशरी

शहरी खेती न सिर्फ अच्छे पोषण के लिए जरूरी है; बल्कि शहरी पर्यावरण को बेहतर रखने में और समुदायों को संगठित करने में भी मददगार है। लेकिन जरूरी है कि इन खूबियों का जिक्र करने के साथ इसकी लैंगिक नजरिये से भी समीक्षा की जानी चाहिए। इस बारे में गायत्री देवी और स्टेफनी बुक्लर द्वारा 2009 में हैदराबाद के बाहरी इलाकों में किया गया अध्ययन रोचक है। गायली और स्टेफनी ने अपने अध्ययन में पाया कि खेती से जुड़ी पसंदों में महिला और पुरुष किसानों के बीच अच्छा-खासा अंतर था; जबकि खेती से जुड़े श्रम का बँटवारा पारंपरिक लिंग-आधारित मानकों के अनुसार ही हो रहा था (देवी और बुक्लर, 2009)। घर के काम का बोझ पूरी तरह से महिलाओं के कंधों पर था और सामुदायिक गतिविधियों में पुरुषों की ही ज्यादा चलती थी।

इसलिए जरूरी है कि भविष्य की नीतियाँ आज के इन सामाजिक यथार्थों के इर्द-गिर्द ही बनाई जाएँ। इस सिलसिले में सबसे अहम बात है कि फैसला लेने में महिलाओं की बराबर की भागीदारी सुनिश्चित हो सके। होवोरका और ली-स्मिथ (2006) का कहना है कि टिकाऊ विकास के एजेंडे को एक जागृत लैंगिक नजरिया अपनाना होगा जिसमें महिलाओं और पुरुषों के मौजूदा संबंधों की समझ हो, और जो महिलाओं की फौरी जरूरतों को तो पूरा करे; साथ ही नाइंसाफी को खतम करने लिए जरूरी बुनियादी बदलाव लाने की अपेक्षा भी रहे। इसलिए शहरी खेती को ध्यान में रखते हुए स्थानीय स्तर पर ऐसे प्रयास सबसे ज्यादा जरूरी हैं जो वैज्ञानिक शोध पर आधारित तो हों ही; लेकिन लैंगिक न्याय भी सुनिश्चित करें।

पल्ला गाँव
तस्वीर : जो अथियाली

दिल्ली में खेतिहर महिलाओं के उदाहरण

शकुंतला नजफगढ़ के इलाके में खेतों में मजदूरी करती हैं। कई साल पहले 25 रुपये दिहाड़ी पर मजदूरी शुरू की थी जो हर साल 10-20 रुपये बढ़ते हुए अब 250 रुपये पहुँची है। दिल्ली और आसपास के सभी खेती वाले इलाकों में महिलाएँ खेतों में इसी तरह मजदूरी करते हुए मिल जाएँगी। शकुंतला पर भी अपने परिवार के गुजर-बसर की जिम्मेदारी है। शकुंतला ने अपने बच्चों को आइटीआइ की पढ़ाई के लिए प्रेरित किया और इसके जरूरी पैसों की व्यवस्था की। इसलिए मजदूरी करते रहना उनकी मजबूरी थी जिससे उनके बच्चे पढ़-लिख पाएँ।

दिल्ली के कुछ भौगोलिक हिस्सों में खेतिहर महिलाएँ दोहरेतरीके से हाशिये का दंश झेलती हैं। जगतपुर गाँव की मूलवासी रुखसाना (उम्र करीब 65 वर्ष) ने बताया कि वे भूमिहीन हैं और एक गुर्जर जमींदार की जमीन पर खेती करती हैं। रुखसाना कई सालों से जमीन किराए पर लेकर साग-सब्जी की खेती कर रही हैं। उनके गाँव में करीब 200 मुसलमान परिवार हैं जो ज्यादातर भूमिहीन हैं। ज्यादातर जमीनें गुर्जर जमींदारों के कब्जे में हैं, यहाँ तक कि ग्रामसभा की जमीनें भी। ज्यादातर गुर्जर जमींदार मुसलमानों को अपनी जमीन नहीं देते; क्योंकि उन्हें डर लगता है कि कहीं मुसलमान उनकी जमीनें हथिया न लें। गांव में इस तरह की खबरें फैली हैं जिसके कारण गुर्जर जमींदारों और मुसलमान किसानों के बीच तनाव का रिश्ता रहता है।

जगतपुर गाँव
तस्वीर : जो अथियाली

दिल्ली की शहरी खेती में कई महिलाओं का योगदान चरवाहे के रूप में भी है। दिल्ली में चरवाहे राजस्थान से भी आते हैं अपने सैकड़ों पशुओं के साथ। इन पशुओं में गायें होती हैं, गधे होते हैं, ऊँट और कुत्ते भी होते हैं। चरवाहे पूरे परिवार के साथ चलते हैं। औरत, मर्द, बच्चे सब एक साथ। कर्पूरी देवी (उम्र करीब 35 साल) एक चरवाहिन हैं जो अपनी बकरियों को निजामुद्दीन पुल के नीचे चराने के लिए लाती हैं। इनके पति रिक्शा ट्रॉली पर साग-सब्जी बेचते हैं। कर्पूरी के पास दो बकरियाँ हैं और एक अडुआ बकरा है।

कई खेतों में पति-पत्नी साथ-साथ खेती करते हैं। बेचू बिन्द और मालती देवी पति-पत्नी हैं और दोनों की उम्र करीब 65 साल है। दोनों मिलकर क्यारियों में मेथी का साग लगाते हैं; लेकिन अच्छी उपज के लिए जरूरी है कि मोथा, दूब और सांठी जैसे खर-पतवार को निकालते रहा जाए। वे एक ही जमींदार से 10-12 साल से जमीन किराए पर लेकर साग-सब्जी की खेती कर रहे हैं। जमीन छिन जाने का खतरा हमेशा बना रहा है। इसके अलावा दिल्ली के इस इलाके में बाढ़ आने का डर भी उन्हें परेशान करता है। इस जमीन के अधिग्रहण का भय भी उन्हें सताता रहता है।

जगतपुर, दिल्ली

तस्वीर : अफ़ज़ल अदीब खान, अविकल पाराशरी

जगतपुर गाँव
तस्वीर : जो अथियाली

दिल्ली की शहरी खेती में महिलाओं की केन्द्रीय भूमिका होने के बावजूद उनका योगदान "अदृश्य किसान" के तौर पर सीमित है। खेती को हमारे समाज में हमेशा से पुरुष-प्रधान माना जाता है; जबकि यह बात अब स्थापित हो चुकी है कि खेती करने वाले समाज में पुरुषों के मुकाबले महिलाओं का अधिक समय काम करने में जाता है; क्योंकि पितृसत्तात्मक समाज में बाहर के कामों के अतिरिक्त घर के ज्यादातर काम भी महिलाओं को ही करने पड़ते हैं।

इस संक्षिप्त प्रस्तुति में हमने देखा कि महिला किसानों, मजदूरों, चरवाहों के साथ भेदभाव होने और उनके हाशिये पर होने के कई कारण हैं और ये कारण भारत और दुनिया के बाकी शहरों में भी कम-ज्यादा महत्त्व के साथ मौजूद हैं। निश्चित तौर से शहरी खेती, शहर के भोजन तंत्र और टिकाऊ शहरी विकास के प्रयासों और अध्ययनों में लैंगिक न्याय का नजरिया अपनाया जाना बेहद जरूरी है।

(दिल्ली की खेती में महिलाओं पर यह संक्षिप्त प्रस्तुति जन संसाधन केंद्र द्वारा प्रकाशित शोधपरक पुस्तक *परिदृश्य से अदृश्य होती खेती* पर आधारित है।)

पल्ला गाँव, दिल्ली
तस्वीर : अविकल पाराशरी

सन्दर्भ

लेविस ममफोर्ड (1961), द सिटी इन हिस्ट्री. प्रकाशक: हरकोर्ट ब्रेस जोवानोविच।

खाद्य एवं कृषि संस्थान (FAO), द फीमेल फेस ऑफ़ फार्मिंग. यह सूचना 27 अक्टूबर, 2020 को इस वेबसाइट से प्राप्त की गई: www.fao.org/gender/resources/infographics/the- female-face-of-farming/en

डोनाल्ड बी. फ्रीमैन (1991), ए सिटी ऑफ़ फार्मर्स: इनफॉर्मल अर्बन एग्रीकल्चर इन द ओपन स्पेसेस ऑफ़ नैरोबी, केन्या. मैक्गिल-क्वीन्स यूनिवर्सिटी ।

एलिस जे. होवोरका और डायना ली-स्मिथ (2006), जेंडरिंग द अर्बन एग्रीकल्चर एजेंडा, आर.ए.यू.एफ. फाउंडेशन।

केरी बून और पीटर ली टेलर (2015), डीकंस्ट्रक्टिंग होमगार्डन्स: फूड सिक्यूरिटी एंड सॉवरेनिटी इन नार्थर्न निकारागुआ, एग्रीकल्चर एंड ह्यूमन वैल्यूज, खंड 33, अंक 2, पन्ने 239-255.

एलिस जे. होवोरका (2006), अर्बन एग्रीकल्चर: एड्रेसिंग प्रैक्टिकल एंड स्ट्रेटेजिक जेंडर नीड्स, डेवलपमेंट इन प्रैक्टिस, खंड 16, अंक 1, पन्ने 51-61.

यू. एन. (संयुक्त राष्ट्र) वीमेन (2017), जेंडर रिस्पोंसिव बजटिंग: ए फोकस ऑन एग्रीकल्चर सेक्टर।

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (2014), घरेलू कार्यों के साथ-साथ विनिर्दिष्ट क्रियाकलापों में महिलाओं की भागीदारी. रिपोर्ट सं. 559 (68/10/3)।

भारत की जनगणना (2011), महारजिस्ट्रार एवं जनगणना आयुक्त का कार्यालय, भारत।

गायत्री देवी और स्टेफनी बुक्लर (2009), जेंडर डाइमेंशन्स ऑफ़ अर्बन एंड पेरी-अर्बन एग्रीकल्चर इन हैदराबाद, इंडिया. वीमेन फीडिंग सिटीज: मेनस्ट्रीमिंग जेंडर इन अर्बन एग्रीकल्चर एंड फूड सिक्यूरिटी. पृष्ठ : 35-50.

जन संसाधन केंद्र (2020), परिदृश्य से अदृश्य होती खेती।

यह पुस्तिका कई लोगों के सामूहिक प्रयास का परिणाम है। सबसे महत्वपूर्ण योगदान रहा है दिल्ली के विभिन्न हिस्सों में खेती करने वाले किसानों, मछुआरों, मजदूरों, पशुपालकों, नवीन तरीकों से खेती करने वाले व्यवसायियों का जिन्होंने हमारे साथ बातचीत करने के लिए वक्त निकाला और अपनी राय और जानकारियाँ हमसे साझा कीं, जन संसाधन केंद्र की टीम जिन्होंने जमीनी शोध करके "परिदृश्य से अदृश्य होती खेती" रिपोर्ट को तैयार किया और जिसके बलबूते हम इस पुस्तिका को तैयार कर सके।

जन संसाधन केंद्र का लक्ष्य सामाजिक आन्दोलनों से प्राप्त मूल्यवान सीखों और संभावित विकल्पों के बारे में सब लोगों की कल्पनाओं को साथ लाकर एकजुटता की नई आधारशिला बनाना है। यह पहल संसाधनों पर लोगों का नियंत्रण वापस लाने की संभावनाएँ बनाने के लिए, और यह समझने के लिए की गई है कि वे कैसे इसके जरिये भूख, बेघरी, प्रदूषण, और जाति, लिंग, धर्म पर टिके सामाजिक अन्याय का उन्मूलन कर सकते हैं। हम संसाधनों के हक के इर्द-गिर्द हो रहे (या संभावित) संघर्ष में आंदोलन समूहों और समुदायों के साथ जुड़कर योगदान करते हैं। सामूहिक प्रतिरोध और रचनात्मक कार्यक्रम के लिए संसाधन उत्पन्न करने के उद्देश्य से हम नियमित रूप से नीतियों की निगरानी, शोध, प्रकाशन और जमीनी स्तर पर नेटवर्किंग के उपाय करते हैं।